शान्ति मन्दिर द्वारा प्रकाशित यह ई-पत्रिका आप सबको समर्पित है ।

सिद्ध मार्ग

© Shanti Mandir अक्तूबर २०११, संस्करण ६

जो हम अपने सद्गुरु से सुनते हैं, शास्त्र में पढ़ते हैं, उसके ऊपर मनन चिन्तन करते हुए, अपने ही जीवन में उसे अंगीभूत करने का प्रयास, पुरुषार्थ हमारा होना चाहिए ।

प्रिय आत्मन्, सप्रेम जय गुरुदेव! सिद्ध मार्ग ई-पत्रिका का छठा अंक प्रस्तुत है । इस अंक में परमपूज्य गुरुदेव श्री स्वामी नित्यानन्द जी द्वारा पंचकुला में दिए गए प्रवचन के सम्पादित अंश प्रस्तुत हैं ।

सिद्ध मार्ग टीम

गुरुदेव का प्रवचन

सत्संग के लिए हमारे यहाँ कहा जाता है कि हम समूह में सत्संग करते रहें । व्यष्टि सत्संग तो हम रोज करें, अपने ही स्थान में, घर में, प्रतिदिन प्रातः समय निकालकर, जो हम अपने सद्गुरु से सुनते हैं, शास्त्र में पढ़ते हैं, उसके ऊपर मनन चिन्तन करते हुए, अपने ही जीवन में उसे अंगीभूत करने का प्रयास, पुरुषार्थ हमारा होना चाहिए । जब एक साथ समूह में आते हैं तब एक-दूसरे को देखते हुए एक-दूसरे के साथ चर्चा करते हुए हमें यह ज्ञान हो जाता है कि जो मेरी गति है और मैं जिस तरह चल रहा हूँ क्या ठीक चल रहा हूँ? सत्संग के माध्यम से हम अपने जीवन को आगे बढ़ायें और आगे बढ़ते हुए अपना जो चिन्तन है वह गहन हो, हमारा हृदय विशाल हो। इस तरह से साधना हमारे लिए फलित हो, ऐसी हम सदगुरु से प्रार्थना करते हैं । अधिकांश हम देखें तो मनुष्य अपने लिये विचार करता है । अपने लिये सोचता है और अपने तक ही विचार सीमित रखता है। । उसको चिन्ता अपनी एक छोटी सी दुनिया की होती है परन्तु हम जब परमात्मा का विचार करें, चिन्तन करें, तो देखते हैं कि वह परमात्मा इस सृष्टि का चिन्तन

सन्त-जन कहते हैं हमारी दृष्टि ऐसी हो कि जहाँ कहीं भी हम देखें तो उसका दर्शन हो जाए क्योंकि वो कहाँ नहीं है?

करते हैं, सृष्टि के कण कण को चलाते हैं। कल हम लुधियाना में एक विद्यालय में गए थे तो वहाँ की एक मैनेजर ने बच्चों से एक प्रश्न पूछा कि सृष्टि में सबसे बड़ा कौन? उसका तो उत्तर सबने तुरंत दे दिया- परमात्मा। फिर उन्होंने पूछा कि सृष्टि में सबसे छोटा कौन? तो कुछ भिन्न भिन्न उत्तर आने लगे। उन्होंने कहा सबसे छोटा भी परमात्मा है। ऐसी कोई वस्तु नहीं जिससे बढ़कर परमात्मा हो और ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसमें परमात्मा न हो। उपनिषद में भी हम पढ़ते हैं कि "अणोरणीयान् महतो महीयान्" कि अगर हम सोचें कि छोटे से छोटा भी क्या है, कि उस में भी वह परमात्मा है और विशाल से विशाल भी हम देखें तो उसमें भी वही परमात्मा है। उस सर्व व्यापक परमात्मा को जानने के लिये, समझने के लिये, उस का अनुभव करने के लिये हम सत्संग करते हैं। मन में एक प्रश्न उठता है कि उसे खोजें तो कहाँ खोजें? सन्त-जन कहते हैं हमारी दृष्टि ऐसी हो कि जहाँ कहीं भी हम देखें तो उसका दर्शन हो जाए क्योंकि वो कहाँ नहीं है ? हमारी बुद्धि में यह समझ नहीं आता है इसके लिये हमारे बाबाजी एक कहानी कहा करते थे। एक गुरु के पास दो लोग जाते हैं कि हमें अपना शिष्य बना लो, हमें कुछ ज्ञान दो। गुरु दोनों को एक- एक सेब पकड़ा देते हैं और कहते हैं कि ऐसी जगह खाकर आओ जहाँ कोई तुम्हें देख नहीं सके। पहला तो भाग जाता है बाथरूम के अन्दर, कुंडी लगा लेता है और वहाँ उसे खाकर गुरु के पास आकर बैठ जाता है। दूसरा तो काफी समय घूमता हुआ इधर उधर भटकता हुआ शाम तक लौटकर आता है और सेब लाकर पुनः सद्गुरु के पास रख देता है और बोलता है कि ऐसी कोई जगह मिली नहीं जहाँ मैं अकेला था। पहले से वो पूछते हैं कि तूने कहाँ खाया तो बोला बाथरूम में कोई नहीं था, मैंने कुंडी लगा ली किसी ने नहीं देखा, किसी को पता ही नहीं था कि मैं सेब खाकर बाहर आया हूँ। गुरु बोले बहुत अच्छा और दूसरे से पूछा तुमने क्यों नहीं खाया, क्या बात है, ऐसी कोई जगह तुम्हें मिली नहीं जहाँ तुम अकेले थे? उसने कहा कि जहाँ कहीं भी मैं गया, जिस किसी स्थान पर मैं गया, मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि परमात्मा देख रहे हैं, भगवान देख रहे हैं। ऐसा कोई स्थान नहीं मिला जहाँ परमात्मा नहीं हो। आपने कहा था कि उस जगह खाना जहाँ कोई नहीं देखता हो परन्तु ऐसा कोई स्थान प्राप्त

सन्तजन हमको पुनः पुनः सत्संग के माध्यम से यही स्मरण दिलाते हैं कि हम जीवन जीते हुए जीवन में सब कुछ करते हुए, सदैव अपने आप को उस परमात्मा के अस्तित्व का स्मरण दिलायें।

हुआ ही नहीं जहाँ भगवान है ही नहीं। हम मन्त्र गाते हैं कि जितनी भी आँखें हैं वो परमात्मा की हैं, जितने भी कान हैं वो भी परमात्मा के, जो कुछ भी है परमात्मा का ही है क्योंकि हम भी हैं तो परमात्मा के ही हैं। इसलिए जीव में जब तक वह चैतन्य आत्मा है तब तक यह शरीर चलता है, देखता है, सुनता है,करता है परन्तु जिस समय, जिस दिन यह आत्मा इस शरीर को छोड़ कर चली जाती है तो हम कहते हैं कि यह शरीर कुछ करता नहीं, चलता नहीं। इसके लिए सन्तजन हमको पुनः पुनः सत्संग के माध्यम से यही स्मरण दिलाते हैं कि हम जीवन जीते हुए जीवन में सब कुछ करते हुए, सदैव अपने आप को उस परमात्मा के अस्तित्व का स्मरण दिलायें। मनुष्य भूल जाता है, कभी कभी हमको अहम् हो जाता है कि मैं करता हूँ, मेरे से हो रहा है, परन्तु संतजन हमें यही पूछते हैं कि वो प्रभु की शक्ति हमारे अन्तर में न हो तो वास्तव में मनुष्य कर क्या सकता है? वह शक्ति होने के कारण ही हमारी बुद्धि का हम सदुपयोग करते हैं, इस शरीर के माध्यम से हम कुछ अपने जीवन में कर बैठते हैं। परन्तु हमारा विचार संकुचित हो जाने से, भय से भरा हुआ हमारा जीवन भी कुछ ऐसा ही हो जाता है। संतजन मिलते हैं तो कुछ अन्दर का पट खोल देते हैं हमारे उस भय को दूर करते हैं फिर हमारे भूले भटके जीवन को एक अच्छी दिशा मिल जाती है। धीरे धीरे हम साधना करते हुऐ अपने आपको जानने का, समझने का प्रयास और पुरुषार्थ करते हैं। शंकराचार्य जी कहते हैं कि हर व्यक्ति इन प्रश्नों का विचार करता रहे "कोऽहं कथमिदं जातं को वै कर्तास्य विद्यते उपादानं किमस्येह सोऽयं विचार ईदृशः।" जीवन में हम सब अपना कर्म- कर्तव्य निभा रहे हैं परन्तु साथ- साथ हम अपने आप से हमेशा पूछते रहें कि वास्तव में मैं कौन हूँ? माता -पिता ने जन्म दिया, समाज ने एक नाम दे दिया, एक पद प्राप्त हो गया, परन्तु अगर हम थोड़ा विचार करते हैं, शरीर भी कुछ समय का है, नाम भी उतने समय तक है जब तक शरीर है, पद और भौतिक प्राप्ति भी उतने समय तक हैं जब तक शरीर है। तो अगर मैं यह सब नहीं हूँ, नाम नहीं, रूप नहीं तो फिर प्रश्न उठता है कि मैं कौन हूँ? ठीक है हम उत्तर देते हैं- मैं परमात्मा से आया हूँ, परमात्मा का अंश हूँ। परन्तु यह बात साक्षात् प्रत्यक्ष अनुभव जब हो जाती है, हम जान जाते हैं, सद्गुरु की कृपा से जब सिर्फ एक विकल्प या विचार रहता है या

"कोऽहम्? अहं ब्रह्माऽस्मि, शिवोऽम्।" हम सिर्फ कहते नहीं, हम हिलते नहीं इस विचार से, परन्तु उस अनुभव से हम दृढ़ हो जाते हैं

हम तोते जैसा बोल नहीं देते हैं तब ये बात हमारे में उतर आती है कि "कोऽहम्? अहं ब्रह्माऽस्मि, शिवोऽम्।" हम सिर्फ कहते नहीं, हम हिलते नहीं इस विचार से, परन्तु उस अनुभव से हम दृढ़ हो जाते हैं। सद्गुरु कि विशेषता अगर हम सोचें, विचार करें तो अपना जो परम स्वरूप है, उसका वो प्रत्यक्ष अनुभव कराकर हमें यह ज्ञान देते हैं कि तुम यह सब नहीं हो, परन्तु तुम परमात्मा का ही अंश हो। गीता में भी हम पढ़ते हैं "ममैवाशों जीवलोके जीवभूतःसनातनः" भगवान कृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि यह सब जो कुछ भी है मेरा ही अंश है, मुझसे भिन्न नहीं है । जब हम किसी माता- पिता से जन्म लेते हैं तो हम गौरव से कहते हैं कि यह मेरे माता पिता हैं, इनसे मेरा जन्म हुआ हैं । जन्म शरीर का है परन्तु शरीर के अन्दर रहने वाली आत्मा का जन्म कहाँ से, तो वो हमेशा रहने वाली चैतन्य शक्ति- परमात्मा से। तो मनुष्य विचार करे- मैं कौन हूँ ? "अहं ब्रह्माऽस्मि उपादानं किमस्ति ।" संसार में हम कुछ बनाते हैं, कुछ उत्पादन करते हैं तो हम कहीं न कहीं से उसके लिए रॉमटेरियल खरीदते हैं । आप किसी फैक्ट्री वाले से पूछेगें तो वो कहेगा कि मेरा रॉमटेरियल चीन से आता हैं। मेरी जो वस्तु है, जिससे बनती है, आज कल सभी कहते हैं कि चायना से आता है । फैक्ट्री में कोई बनाने वाला होता है जो उस वस्तु को बनाता है। परन्तु शास्त्र कहता है कि हम इस महान सृष्टि के बारे में विचार करें कि यह सृष्टि आयी कहाँ से, किस वस्तु से यह बनी तो उपनिषद् में एक कथा आती है कि शिष्य जब अपने गुरु से यह प्रश्न करता है कि "उपादानं किमस्ति" ये सब जो बना है कहाँ से, किस से बना है ? तो गुरु उससे कहते हैं कि वो वट वृक्ष है, उस वट वृक्ष का एक फल ले आओ। तो शिष्य वहाँ से एक फल ले आता है । गुरु कहते हैं कि इस फल को खोलो । फल को जब वो खोलता है तो उसके अन्दर बीज होता है, तो गुरु कहते हैं उस बीज को निकालो, जब उस बीज को निकालते हैं तो गुरु कहते हैं उस बीज को खोलो, उस बीज के अन्दर क्या है? तो वह कहता है कि इस बीज के अन्दर तो कुछ नहीं है, बस आकाश। तो गुरु महाराज कहते हैं कि कुछ नहीं में से इतना बड़ा वृक्ष बना, उस बीज के अन्दर कुछ नहीं, कुछ नहीं के अन्दर से इतना बड़ा वृक्ष बना है । तो वैसे ही परमात्मा भी हमारी इन आँखों में दिखता

हम सोच समझकर विचार करके जीवन में कर्म करें। ऐसा नहीं कि कुछ भी करें, कैसा भी करें परन्तु विवेक के साथ, भगवान ने हमें बुद्धि दी है

नहीं । कुछ नहीं से इतनी बड़ी सृष्टि बना देता है । तो हम सोचें, विचार करें कि यह कैसे बना, कहाँ से बना, किसने बनाया, कुछ नहीं में भी तो कोई बनाने वाला होता है । तो हमारे बाबाजी कहते थे कि नास्तिक लोग कहते हैं कि भगवान कहाँ हैं? भगवान तो दिखता नहीं, तो हम कैसे मानें? एक वैज्ञानिक आधुनिक पिता अपने पुत्र से ऐसी चर्चा करता है कि लोग कहते हैं भगवान है पर भगवान तो दिखता नहीं। पुत्र भगवान को मानता है पर पिता नहीं। एक दिन पुत्र सोचता है कि पिता को मुझे समझाना पड़ेगा कि भगवान है । उनका विज्ञान भले ही वो मानता नहीं हो परन्तु उनको बताना पड़ेगा । तो एक कमरे में वो बड़ा सा एक कैनवस लगा देता है और उस पर एक सुन्दर रंगीन चित्र बना देता है। महीने भर बाद जब वह चित्र बन के तैयार हो जाता है तब अपने पिता को ले आता है उस कमरे में और दिखाता है कि देखो पिता जी माता लक्ष्मी का कितना सुन्दर चित्र बना है। पिता जी पूछते हैं कि यह चित्र बनाया किसने? बेटा कहता है कि पिताजी आप मेरी बात सुनकर अचम्भित रहोगे, मैं आया इस कमरे में, रंग पड़े हुए थे ब्रश पड़ा हुआ था, कैनवस लगा हुआ था, कुछ ऐसी गर्मी इस कमरे में उत्पन्न हुई, बोतल खुल गई ब्रश उस बोतल के अन्दर चला गया और बस मैं देखता हूँ कि यह ब्रश चल रहा है। पिता जी हँसते हैं, बोलते हैं बेटा ऐसा हो नहीं सकता कि बोतल खुल गयी, ब्रश बोतल के अन्दर गया, चित्र बन गया। कोई व्यक्ति होगा जिसने बोतल खोली होगी, ब्रश डुबाया होगा, ब्रश से चित्र बनाया होगा। बेटा कहता है, "नहीं नहीं पिता जी आप मानोगे नहीं कोई नहीं था । ब्रश अपने आप से बोतल के अन्दर डूब कर चित्र बना रहा था और मैं खड़ा देख रहा था यह कैसा चमत्कार हो रहा है।" पिता हँसने लगता है, कहता है, "बेटा मैं इतना मूर्ख नहीं हूँ, वैज्ञानिक हूँ, पढ़ा लिखा हूँ, समझदार हूँ, तुम मेरे को ऐसे बनाओ मत।" बेटा कहता है, "पिता जी जब इतनी बड़ी सृष्टि अपने आप से बन सकती है, कोई बनाने वाला नहीं, वृक्ष हैं, जल है, पहाड़ हैं, गर्मी है, सर्दी है, सूर्य है, चन्द्र है, यह सब बनाने वाला कोई नहीं तो यह छोटा सा चित्र! इसमें कौन सी बड़ी बात है कि अपने आप से बन गया।" पिता कहता है कि सोचता हूँ, इस पर विचार करता हूँ। वैज्ञानिक लोग तो इतनी जल्दी बात नहीं मानेगें कि चित्र अगर अपने आप से नहीं बना है तो फिर सृष्टि

सत्संग का हर बार एक शब्द, एक वचन, एक प्रतिशत भी अगर आप अपने साथ ले जाते हैं, अङ्गीकार हो जाता है, वो आपको जीवन में लक्ष्य की ओर ले जाएगा।

किसने बनायी? बनी तो कैसे बनी, किन वस्तुओं से बनी, इसके ऊपर हम विचार करेगें। इसके लिये आदि शंकराचार्य जी भी हर साधक को, हर विचार शील पुरुष को यही कहते हैं, इस तरह से विचार करते रहें कि मैं कौन हूँ, ये सब कैसे बना है, इसको बनाया किसने? हम अगर अपने आप से ऐसा प्रश्न पूछने लगते हैं, विचार करने लगते हैं, तो सत्संग में हमारी कुछ रुचि भी बढ़ती है। सत्संग श्रवण करते सुनते हम जब कर्म करते हैं तो हम सोच समझकर विचार करके जीवन में कर्म करें। ऐसा नहीं कि कुछ भी करें, कैसा भी करें परन्तु विवेक के साथ, भगवान ने हमें बुद्धि दी है। कई बार हमारे साथ जो होते हैं, वो करते हैं, सब करते हैं तो मैं भी करता हूँ। उसने किया तो इसके लिए मैं करता हूँ परन्तु मैं उनसे निवेदन करता हूँ कि भगवान ने हमें बुद्धि दी है, हर मनुष्य को हर जीव को अलग अलग रूप दिया है, हर एक में कुछ न कुछ विशेषता भगवान ने दी है तो हर मनुष्य अपनी बुद्धि का उपयोग करे, सदुपयोग करे, तो हम जीवन को सुन्दर, सुचारु, अच्छे ढ़ंग से चला सकते हैं। ऐसी कोई आवश्यकता नहीं कि वो करता है इसलिए मैं भी करूँ। विवेक शील पुरुष अपने आप से पूछता है करूँ तो क्यों करूँ, इसका उद्देश्य या इसके पीछे रहस्य क्या है? इसके लिए हमारे यहाँ अगर सन्त जब भी बनते हैं, इसलिये बनते हैं क्योंकि उन्होनें थोड़ा हटकर विचार किया, सोचा, साधना के समय अपने जीवन का अधिक से अधिक समय उसमें लगाकर कि मैं कौन हूँ, यह सब क्या है, इस मनुष्य जीवन में आया हूँ तो मुझे करना क्या है? तो कहते हैं कि अगर हमने अपने आप को जान लिया, पहचान लिया, सृष्टि को समझ लिया तो हम सोच सकते हैं समझ सकते हैं कि मेरा जीवन सफल रहा, जीवन मैं कुछ कमाकर इस देह को छोड़कर जब जाऊँगा तो साथ कुछ ले जाऊँगा। तो हम भी सब मिलकर सत्संग के माध्यम से मन्दिर जब जब आऐं थोड़ा दो पाँच मिनट बैठकर विचार करें सोचें समझें कि क्यों आता हूँ, क्या चाहता हूँ और अगर मन्दिर में आया तो मन्दिर से कुछ बदलकर, कुछ परिवर्तित होकर कुछ अपने आप में लेकर मन्दिर से जाऊँ। हर वक्त अगर हम एक प्रतिशत भी कुछ अपने आप को बदलकर जाते हैं, सत्संग का हर बार एक शब्द, एक वचन, एक प्रतिशत भी अगर आप अपने साथ ले जाते हैं, वो आपके जीवन में अङ्गीकार हो जाता है तो जीवन जब

तक समाप्त हो, तब तक कुछ न कुछ आपके पास ऐसी गठरी, ऐसा ज्ञान जमा हो जायेगा, एकत्रित हो जायेगा, जो आपको फिर आपके जीवन में लक्ष्य की ओर ले जाऐगा। अभी हम कुछ समय ॐ नमः शिवाय धुन करेंगे सभी से निवेदन हैं कि हम सब अपना लक्ष्य अपने अन्तर की ओर ले जायें। हमारा मन, हमारी इन्द्रियाँ, जो बाहर भटकती हैं उसको हम कूर्म की तरह अन्दर की ओर करें, मन को स्थिर करें, शान्त करें । जब हम जायें उसी शान्ति को उसी स्थिरता को अपने साथ यहाँ से लेते हुए जायें ।

सदगुरुनाथ महाराज की जय

हमारा मन, हमारी इन्द्रियाँ, जो बाहर भटकती हैं उसको हम कूर्म की तरह अन्दर की ओर करें, मन को स्थिर करें, शान्त करें ।